वैश्विक तापनः वास्तविक संकट कम, मानसिक संकट अधिक

प्रेम चन्द्र श्रीवास्तव
पूर्व संपादक, "विज्ञान", विज्ञान परिषद प्रयाग
महर्षि दयानंद मार्ग, इलाहाबाद–211002, उ0प्र0, भारत
पताः अनुकम्पा, वाई 2 सी, 115/6, त्रिवेणीपुरम्, झूँसी, इलाहाबाद–211019, उ0प्र0, भारत

यदि हम आज से 60–70 वर्ष पूर्व की दुनिया की तुलना आज की दुनिया से करें तो ऐसा लगता है जैसे हम आज अनेक प्रकार के संकटों से घिरे हुए हैं। कभी–कभी तो ऐसा लगने लगता है जैसे हम किसी अनजान दुनिया में चले आये हों। जनसंख्या के बढ़ने के साथ ही समस्याएं बढ़ने लगती हैं। शुद्ध पेयजल की समस्या, वायु में विषैली गैसों का विसर्जन, रासायनिक उर्वरकों से मिट्टी की गुणवत्ता का नष्ट होना, आवास और जलाने के लिए लकड़ी की जरूरतों में वृद्धि से जंगलों का लगातार काटा जाना, परिणामस्वरूप बाढ़ और सूखे की समस्याएं, मोटर वाहनों, हवाई जहाजों, लाउडस्पीकरों का शोर आदि आदि। इन दिनों वैश्विक तापन(ग्लोबल वार्मिंग) अर्थात् पृथ्वी के बढ़ते ताप की समस्या से भारत सहित सभी देश भयाक्रांत हैं। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी के बढ़ते ताप से उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों की बर्फ की टोपियों के पिघलने से समुद्र तटीय नगरों पर खतरा मंडरा रहा है। समुद्र के जल स्तर के बढ़ने से सागर तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जायेंगे और मुम्बई जैसे महानगर जो समुद्र तटों पर बसे हैं उनके जलमग्न होने का खतरा बना हुआ है।

हम यदि थोड़ा ठंडे दिमाग से सोचें तो हमें ग्लोबल वार्मिंग से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। किन्तु आइये पहले मौसम परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय पैनल की रिपोर्ट की चर्चा कर लें। इस रिपोर्ट में मुख्य चार मुद्दे हैं, जिन पर बहस हो सकती है।

1. प्रश्न है कि क्या पृथ्वी इस प्रकार गर्म होती जा रही है जिसकी कोई मिसाल नहीं है, जिसका इसके पूर्व के इतिहास में कोई उल्लेख नहीं मिलता है ?
2. क्या औद्योगिकीकरण और जीवन यापन करने का उच्चस्तर "ग्लोबल वार्मिंग" के लिए जिम्मेदार है ?
3. वे कौन से देश अथवा क्षेत्र हैं जो अत्यधिक मात्रा में हरित पौधगृह गैसों का वातावरण में विसर्जन करते हैं ?
4. क्या विज्ञान और प्रौद्योगिकी की बड़ी उपलब्धियों के माध्यम से हम विषैली गैसों के विसर्जन को कम करते हुए स्वीकृत सीमा तक ला सकते हैं ?

वैसे होना तो यह चाहिए था कि वैश्विक तापन पर निष्पक्ष बहस होती, किन्तु बिना तटस्थ बहस के ही अचानक भय फैलाने वाला कोलाहल हो गया है। यदि किसी ने किसी और तरह का विचार प्रकट किया तो उसे शंका की नजरों से देखा जाता है। इतिहास साक्षी है कि संसार में "कयामत के दिन"(डूम्स डे) की भविष्यवाणी करने वालों की कमी नहीं रही है। वर्षों पूर्व 1768 में थॉमस माल्थस ने अपना पूर्वानुमान प्रस्तुत किया था, जिसके अनुसार बढ़ती जनसंख्या भोजन की आपूर्ति को पीछे छोड़ देगी और इसका परिणाम होगा दुर्भिक्ष, महामारी और मानव–सभ्यता के एक बड़े हिस्से का काल के गाल में समा जाना। किन्तु बाद में माल्थन गलत सिद्ध हुए क्योंकि मॉल्थस ने एक स्रोत की पटुता पर ध्यान नहीं दिया था और वह स्रोत है– मानव मस्तिष्क। मानव मस्तिष्क प्रारंभ से ही समस्याओं के समाधान ढूँढ़ता रहा है। इतिहास में इसी प्रकार का एक और उदाहरण मिलता है। शीर्ष के वैज्ञानिक और समाज के नेताओं ने मिलकर "क्लब ऑफ रोम" नामक एक संस्था का रोम में गठन किया और 60 के दशक की समाप्ति के निकट एक अध्ययन किया। इस अध्ययन को डेनिस मीडोज ने प्रायोजित किया था। अध्ययन के परिणाम "लिमिट्स टू ग्रोथ"(विकास की सीमा) नाम से प्रकाशित हुई। इसमें भविष्यवाणी की गई थी कि आर्थिक वृद्धि तेजी से हमारे प्राकृतिक स्रोतों को ग्रास बना लेगी और परिणामस्वरूप महाविपत्ति की स्थितियों का निर्माण होगा। किन्तु ऐसा तो अब तक घटित नहीं हुआ और एक सच्चाई यह है कि बहुत पहले ही "क्लब ऑफ रोम" ने माल्थस के कथन को अस्वीकार कर दिया था।

हमें यह ध्यान रखना है कि हम कहीं अतिवादी दृष्टिकोण के शिकार न हो जायें। वैज्ञानिकों की एक बड़ी संख्या इस विचार को नहीं मानती है कि मौसम की महाविपत्ति हमारे ऊपर मंडरा रही है और आर्थिक प्रगति एवं औद्योगिकीकरण इसका कारण है। यहाँ इस तथ्य का उल्लेख करना समीचीन होगा कि विश्व के 60 अग्रणी मौसम विज्ञानियों ने कनाडा के प्रधानमंत्री को एक पत्र में लिखा– "विश्व के मौसम परिवर्तनों का प्रायः कारण प्राकृतिक रहा है और मानव प्रभाव को प्रकृति के शोरगुल से अलग करना असंभव है।" सैली बैलीयुनस और विली सून जो हार्वर्ड स्मिथसोनियन सेण्टर फॉर एस्ट्रोफिजिक्स से जुड़े हुए हैं, ने सभी लेखों से परिणाम निकालते हुए यह सुझाव प्रस्तुत किया कि बीसवीं सदी संभवतः अपने आप में उग्र मौसम का समय रहा है।

वैसे वास्तविकता तो यह है कि उग्र मौसम 800–1300 बीसीई के बीच मध्ययुगीन ताप काल रहा है और सम्पूर्ण विश्व में 1300–1900 के बीच नन्हा हिम युग आया, उद्योगों द्वारा हरित पौधगृह गैसों के वातावरण में विसर्जन के बहुत पहले ही अनेक वैज्ञानिक इस परिणाम पर पहुँचे कि उत्तरी ध्रुव में बर्फ का जमाव 1979 से अपरिवर्तित रहा है, जबकि दक्षिणी ध्रुव क्षेत्रों (अंटार्कटिका) में बर्फ का जमाव वास्तव में बढ़ा है। रिचर्ड एस0 लिण्डजेन और एल्फ्रेड पी0 स्लोअैन जो मीटीयोरोलॉजी एट मिट के प्रोफेसर हैं के अनुसार हमारे पास ऐसा कोई प्रमाण नहीं है, जिसके अनुसार यह कहा जा सके कि ग्लोबल वार्मिंग गंभीर समस्या है। उपरोक्त वैज्ञानिकों के विचार के विरूद्ध नओमी ओरस्कीज, जिन्होंने 928 लेखों का अध्ययन किया और इस परिणाम पर पहुँचे कि पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध में ग्लोबल वार्मिंग का कारण हरित पौध गृह गैसों द्वारा प्रदूषण रहा है। बेनी पेईसर ने 12,000 लेखों का अध्ययन किया जो मुख्य रूप से मौसम परिवर्तन से संबंधित थे। वे इस परिणाम पर पहुँचे कि 12,000 लेखों में से अधिकांश लेखों में मौसम परिवर्तन का कारण मानव गतिविधियां हैं, इस प्रकार का उल्लेख लेखों में नहीं मिलता है।

किन्तु हम सभी के लिए यह जानना बहुत आवश्यक है कि वातावरण में कौन देश सबसे अधिक विषैले कार्बन डाईऑक्साइड गैस का विसर्जन करता है। अमेरिका इस सूची में सबसे आगे है। एक पुरानी सूचना के अनुसार अमेरिका ने 1999 में प्रति व्यक्ति 5.60 टन कार्बन का विसर्जन किया, रूस ने 2.72 टन प्रति व्यक्ति, ई यू ने 2.40 टन, जापान ने 2.40 टन, चीन ने 0.53 टन और भारत ने लगभग 0. 25 टन प्रति व्यक्ति कार्बन विसर्जित किया था। उपरोक्त आँकड़ो से सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वास्तव में दोषी कौन है। उन्नत और साधन सम्पन्न देश निश्चित रूप से अधिक दोषी हैं अतएव उन्हें स्वयं आकर वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड के विसर्जन को कम करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि थोड़ा उत्तरदायित्व प्रगतिशील देशों का भी है अतएव उन्हें भी इस ओर ध्यान देना होगा। सम्पन्न देशों को चाहिए कि वे तकनीक और धन दोनों ही प्रगतिशील और निर्धन देशों को उपलब्ध कराएं क्योंकि विकसित देश तकनीक और व्यय होने वाले धन दोनों से सम्पन्न हैं। इस संबंध में "इण्टरनेशनल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (अंतर्राष्ट्रीय मौसम परिवर्तन समिति)" की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो सकती है।

विकसित की जाने वाली तकनीकों में प्रदूषण–मुक्त ऊर्जा के लिए नई प्रौद्योगिकियों की खोज, आवागमन के साधनों–मोटर वाहनों आदि में जैव–ऊर्जा के प्रयोग को प्रोत्साहन, धरती पर चलने वाले वाहनों को हाइड्रोजन गैस और जलवाष्प (स्टीम) से चलाये जाने को प्राथमिकता प्रदान करना। सोलर थर्मल पॉवर का प्रयोग, सौर कुकर, सौर चूल्हों का प्रयोग, जलाने के लिए लकड़ी और कोयले के स्थान पर गैस का प्रयोग, पवन ऊर्जा और सागर ऊर्जा का प्रयोग, यह ध्यान रखते हुए कि किस स्थान विशेष के लिए कौन सी ऊर्जा उपयुक्त है और साथ ही साथ सुलभ भी है। न्यूक्लियर ऊर्जा भी प्रदूशणमुक्त ऊर्जा है किन्तु इसके उत्पादन और प्रयोग दोनों में ही विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। भारत इस दिशा में कदम बढ़ा रहा है जो शुभ लक्षण है।

इस प्रकार हम अपनी आवश्यकताओं में कटौती कर सकते हैं और जहाँ तक संभव हो मानवीय गतिविधियों पर किसी सीमा तक अंकुश लगा कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा में कमी कर सकते हैं। ऐसा हमें अविलम्ब करना होगा। इस प्रकार कुल मिलाकर हमें घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है। वास्तविक संकट कम और मानसिक संकट अधिक प्रतीत होता है। मुझे मनुष्य की बुद्धि और उसके विवेक पर आस्था है। हम समस्याओं से निपटने में सक्षम हैं, बस विवेक से काम लेने की आवश्यकता है। इसलिए बिना भयभीत हुए समस्या के समाधान में जुट जाना है। आवश्यकता है मानव मस्तिष्क की क्षमता पर दृढ़ विश्वास की।